नई सदी के भारत की शिक्षा : दशा एवं दिशा

डॉ0 उमारतन यादव,
एसोसिएट प्रोफेसर–अर्थशास्त्र विभाग,
बुन्देलखण्ड महाविद्यालय (झाँसी)

शोध सारांश

नई सदी के प्रारम्भिक दो दशक के दौर में ऐसा लगता है कि पिछली कुछ सदियों से भारतीयों ने अपने ज्ञान दर्शन अध्ययन और आध्यात्मिक चिंतन को भुला दिया है। पंतजलि एवं पाणिनि जैसे ऋषियों मनीषियों को योग विद्या और वैज्ञानिक चिंतन का कितना गहन अध्ययन था, यह तब मालूम पड़ता है, जब उसकी जानकारी लेने यूरोप और अमेरिका जैसे समृद्धिशाली देशों के लोग भारत के पास आते हैं। जिस प्राकृतिक चिकित्सा और देशी दवाओं पर कभी भारत का एकाधिकार था, उसे भी हमने आधुनिकता की चका चौध एवं अंग्रेजियत के वसीभूत होकर विस्मृत कर दिया है और अब तो स्थित यहाँ तक आ गयी कि इसकी जानकारी देने लोग बाहर से आ रहे हैं। नीम, हल्दी, वासमती चावल इत्यादि के पेटेन्ट अमेरिका और जापान जैसे देशों में बन रहे है। अतः प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के स्थान पर देशज शिक्षा प्रणाली को अपनाना अब आवश्यक हो गया है। लार्ड मैकाले की शिक्षा प्रणाली को कोसते– कोसते तो हमने पिछले चौहत्तर वर्ष व्यर्थ ही गवां दिए। स्वदेशी के ढोल पीटने वाले तथा कथित लोग अपने घर, परिवार, संस्कृति आचार–विचार, दैनिक उपायोग की वस्तुओं कार्य प्रणाली और विचारों से कितने स्वदेशी है, जग जाहिर है, भाषाई विखण्डन इतना अधिक बढ रहा है कि पाँच मिनट अंग्रेजी बोलने वाला व्यक्ति भी छटे मिनट अपनी भाषा में आ जाता है। अपनी शिक्षा प्रणाली ज्ञान विज्ञान, कार्य संस्कृति आदि का विकास, अपने ही संसाधनों एवं अपनी ही भाषा से करना अब समय की माँग ही नहीं भारत में अनिवार्यता महसूस की जाने लगी है।

Keywords : नई सदी,भूमण्डलीकरण, बौद्धिक सम्पदा,**भारत की शिक्षा,चुनौतियाँ।**

नई सदी के आधुनिक भूमण्डलीकरण युग में किसी भी राष्ट्र के लिए उसके भौतिक एवं मानवीय संसाधनों का अत्यन्त महत्व है। वस्तुतः भौतिक एवं मानवीय संसाधन ही किसी राष्ट्र को आग्रणी बनाने में सक्षम हैं। कोई भी राष्ट्र तभी उन्नति कर सकता है, जब उस राष्ट्र के सभी नागरिकों को विकास में सर्वोत्तम अवसर प्राप्त हों तथा वे उनका लाभ उठाने में समर्थ हों। वस्तुतः मानव जाति के विकास का आधार शिक्षा प्रणाली ही है। प्रत्येक मनुष्य के अन्दर कुछ जन्मजात शक्तियाँ निहित होती हैं, जिनके प्रस्फुटन से ही व्यक्तित्व का विकास होता है। विकास के आधुनिक युग में राष्ट्र की बौद्धिक सम्पदा को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य की जन्मजात शक्तियों का अधिकतम विकास करके उसके ज्ञान बोध व कौशल में वृद्धि की जा सकती है। शिक्षा एक ओर जहाँ व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करके उसकी व्यक्तिगत

उन्नति का मार्ग प्रशस्त करती है, वहीं दूसरी ओर वह उसे समाज का एक महत्वपूर्ण व उत्तरदायी सदस्य तथा राष्ट्र का एक सुयोग्य, कर्त्तव्यनिष्ठ व सजग नागरिक भी बनाती है।

इसमें कोई दो राय नहीं कि उदीयमान भारत स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद योजनाबद्ध व्यूहरचना कर विविध क्षेत्रों में विकास पथ पर तेजी से आगे बढ़ रहा है, प्रत्येक क्षेत्र में नये–नये कीर्तिमान स्थापित करता हुआ विश्व के विकसित राष्ट्रों की पंक्ति में खड़ा होने जा रहा है और पूर्ण विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि उसका यह स्पप्न भी पूर्ण हो जायेगा जिसका श्रेय अन्य कारकों के साथ–साथ शिक्षा को भी जाता है। प्राचीन भारतीय आर्यभाषा काल से लेकर आधुनिक भारतीय आर्यभाषा काल तक अर्थात् वैदिक काल से आज तक के आज तक के समस्त ग्रन्थ इसी तथ्य की ओर इंगित कर रहे हैं कि मानव में अपार शक्ति, अटूट साहस, उच्चतम विवेक विद्यमान है। ऐसे होने पर भी आज शिक्षा क्षेत्र में वह उदासीन क्यों है? शिक्षक, विद्यार्थी, समाज व शासक वर्ग क्यों अपनी प्राचीन जीवन मूल्यों एवं वैदिक परम्पराओं को भूल बैठा है ? जिसके कारण आज शिक्षा की पूर्व परम्परायें टूटती जा रही हैं और मानव निष्क्रिय बनकर हाथ पर हाथ रखे हुए उन्हें देख रहा है। आखिर कब तक वह किंकर्तव्यविमूढ़ बना देखता रहेगा ?

यदि यह कहा जाय कि शिक्षा किसी राष्ट्र के चहुमुखी विकास की आधारशिला है तो अतिश्योक्ति नहीं होगीं क्योंकि शिक्षा के माध्यम से ही व्यक्ति समाज एवं राष्ट्र में किसी भी क्षेत्र में आगे बढ़ने की क्षमता पैदा होती है। जिसके बल पर वह निरन्तर आगे बढ़कर नित्य नये–नये आयाम खोजता एवं प्राप्त करता है। शिक्षा के विकास की दिशा निर्धारित करने में शिक्षक अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है अथवा यदि यह कहा जावे कि शिक्षा रूपी भवन उसी के ऊपर खड़ा होता है तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी और यह महत्वपूर्ण पक्ष है । मानव जीवन के उत्थान एवं विकास के लिए शिक्षा ही सबसे उपयुक्त एवं सशक्त साधन है; जो हमारे समाज, राष्ट्र एवं संस्कृति को परिवर्द्धित एवं परिष्कृत करती है। शिक्षा मानवीय मूल्यों का निर्माण कर जगत के समस्त प्राणियों एवं वनस्पतियों में मानव की श्रेष्ठ ही नही बनाती वरन् उसे सबके संरक्षक एवं स्वामित्व का भार भी प्रदान करती है, और इन्ही नैतिक गुणों से युक्त मानव ही वास्तविक मनुष्य है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है–मनुष्य में मनुष्यता का विकास हो, शिक्षार्थी आत्म निर्भर बने, उसके चरित्र का निर्माण हो और अन्ततः जीवन यात्रा पूरी करके वह मोक्ष को प्राप्त करें, लेकिन वर्तमान शिक्षा प्रणाली से इनमें से एक भी उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो रही है। शिक्षा केवल उदरपूर्ति एवं धनार्जन का साधन रह गयी है। यही कारण है कि छात्रों का दिन–प्रतिदिन नैतिक पतन हो रहा है। आज गुरूजनों का आदर करना तो बहुत ही दकियानूसी बात हो गयी है।

स्वतत्रंता प्राप्ति के पश्चात् भारत ने धीमी किन्तु सतत् विकास यात्रा पूरी की है। स्वतत्रंता के समय देश लगभग निरक्षर हो गया था। साक्षरों की संख्या उंगलियों में गिनने लायक थी, कहने का तात्पर्य है कि देश की औसत साक्षरता न्यून ही थीं। ब्रिटिश शासन ने अपना हित साधने के लिये भारतीयों साक्षर को बनाया था ताकि वे उनके कार्यो में सहयोग कर सके। भारत सरकार ने इस ओर काफी ध्यान दिया। इक्कीसवीं सदी का भारत शिक्षित युवा के रूप में विश्व के सामने उभर कर आया है। जनसंख्या की दृष्टि से विश्व का दूसरा देश भारत है। युवा शक्ति के बल पर आज देश ने हर क्षेत्र में प्रगति की है। औद्योगिक क्रांति ने शिक्षा व्यस्था को जिस प्रकार बदला था। सूचना क्रांति कमोबेश उसी भूमिका को नये रूप में निभाने को तैयार है। इसके आगामी प्रभाव को लेकर चर्चा समीचीन

होगी। सन 1857 ई0 में कलकत्ता विश्वविद्यालय की स्थापना के बाद उच्च शिक्षा के संस्थागत रूप के लगभग 161 पूरे हो गये हैं। आज भारत ,चीन और अमेरिका के बाद विश्व की तीसरी बड़ी शिक्षा व्यवस्था है। लेकिन उपलब्धियों के नाम पर पूरे समाज विज्ञानों में किसी सर्वमान्य मौलिक सिद्वांत का विकास नहीं हुआ है। फिर उच्च शिक्षा की गुणवत्ता को लेकर होने वाला समूचा विमर्श क्या सिर्फ कर्मकांड की औपचारिकता या अथवा इसके पीछे कोई सुनियोजित चिंतन है। ऐसे में महान शिक्षा शास्त्री मार्टिन कारनाय का स्मरण समीचिन होगा। कारनाय''सांस्कृतिक साम्राज्यवाद'' में कहते हैं ;'' उच्च शिक्षा का उददेश्य सृजन,रचना और आविष्कार का परिवेश औैर ऐसे मस्तिष्क को तैयार करना ,जो समालोचना तथा परीक्षण के योग्य हो।[1] पर इस नई सदी में हमें हम शैक्षिक संस्कृति के संक्रमण से गुजर रहे हैं। सभ्यता के एक स्तर से सर्वथा भिन्न सभ्यता के दूसरे स्तर ने सक्रंमण से मानव जीवन की सम्पूर्ण दिनचर्या ही बदल दी है। विज्ञान तकनीकी एवं आधुनिकीकरण की चकाचौंध से प्रभावित सूचनाओं के तथाकथित इस युग ने जानकारियाँ एवं उनके स्रोतों को बढ़ाकर विश्व को एक छोटे से गॉव में तो समेटा ही है, लोगों का अपने कौशल गुण क्षमता तथा बुद्धि को विकसित करने पर मजबूर भी कर दिया है।

शिक्षक वर्ग समाज का प्रबुद्ध वर्ग होता है जो भूत,वर्तमान तथा भविष्य के विभिन्न विषयों पर चिन्तन करता रहता है। पर आज का शिक्षक केवल वेतनभोगी होकर रह गया है। बुनियादी शिक्षा की स्थिति तो और अधिक खस्ता हाल हो गयी है। प्राथमिक शिक्षा केवल मिड–डे–मील तक सीमित रह गयी । सरकारी पाठयक्रम आज के युगानुरूप नहीं है। व्यवसायिक शिक्षा का बाजारीकरण हो गया है। कम्प्यूटर शिक्षा सिर्फ कागजों पर सिमट गयी है। कम वेतन में अन्य शिक्षित लोगों ने शिक्षा को पूर्ण व्यावसायिक धंधे का रूप तो दे दिया लेकिन वास्तविक संस्कारवान शिक्षा के नाम पर शिक्षा मंहगी होती चली गई है। सरकारी सहायताओं को भ्रष्ट तरीकों से लूटने का धंधा भी पनपने लगा है–इतना ही नहीं सरकारी विद्यालयों के अध्यापकों द्वारा अधिकाधिक तनखाएँ प्राप्त करने के उपरान्त भी ट्यूशन पढ़ाने के नाम पर अधिक धन कमाने की होड़ ने सरकारी विद्यालयों में शिक्षा के नाम पर भ्रष्टाचार को ही बढ़ावा मिला और अध्यापक मात्र धन अर्जित करने की मशीन मात्र बन गये।

स्वयं ज्ञानी और शिक्षित बनने की होड़ में ग्राहक रूपी छात्रों की संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है। क्या ये सभी छात्र ज्ञान–शिक्षा संस्कारों को ही ग्रहण करने के लिए लालायित है? यह सवाल बढ़ती बेरेजगारी में विशेष ध्यान देने योग्य हैं। अधिकांश छात्र सिर्फ सरकारी नौकरी प्राप्त करने मात्र को ही शिक्षा प्रमाण पत्र को सुलभ साधन समझते हैं। साधन सुलभ अभिभावक भी अपने बच्चों को सिर्फ किसी प्रकार प्रमाणपत्रों के दम पर सिर्फ सरकार नौकरी दिलवाने को हर प्रकार का रास्ता अपनाने से भी नहीं हिचकते ,चाहे वह कैसा भी भ्रष्ट रास्ता क्यों न हों।

संवादों का विचार के और समाज की उन्नति में कितना महत्वपूर्ण स्थान है,इसका उदाहरण है कि आज पश्चिमी सभ्यता की उन्नति और उसकी श्रेष्ठता का मूल ,उनका चिंतन ,कभी सुकरात के संवादों से ही निकला था। यह अलग बात है कि इस संवाद की कीमत उन्होंने अपनी जान दे कर चुकाई। संवाद संबंधों ही नही लोकतांत्रिक चेतना और जीवंतता को भी जन्म देता है। भारतीय शिक्षा संस्थाओं में भेदभाव और प्रोटोकाल के पालन पर अतिशय ध्यान देने के बारे में शिक्षा शास्त्री प्रो0 कृष्ण कुमार लिखते हैं '' इस संकीर्ण मनोवृति के कारण शिक्षक एक समुदाय की तरह काम करने की संभावना से वंचित रह जाते हैं। उनके भिन्न कक्षायी अनुभव व्यक्तिगत रह जाते हैं और स्कूल ...कॉलेज एक जीवित संस्था की तरह काम करने के स्थान पर

एक ढॉंचा रह जाते हैं,जिसमें बच्चों की दैनिक आवागमन की रस्म नियमित रूप से संपन्न होती है।[2]

भेदभाव का व्यवहार अस्थायी शिक्षकों की इंसानी गरिमा का क्षरण करता है। शोषण धीरे धीरे जीवन में एक स्वीकार्य तथ्य की तरह चलन का अंग बन जाता है।यह चलन केवल पीडित के ही नहीं बल्कि समूचे तंत्र को मानवीय संवेदनाओं से वंचित कर देता है। जार्ज आरवेल के शब्दों मे कहें तो अपनी श्रेष्ठता औरसीनियारिटी की रक्षा के लिए कुछ लोग पूरे तंत्र को ही ऐसा सूअरबाड़ा बना देते हैं । इस बात का अहसास किए बगैर कि उनकी बादशाहत वास्तव में एक सूअर की बादशाहत है,जहॉं कीचड़ की कालिमा ही कालिमा है,स्वतंत्रता और इंसानियत का उजाला नदारद है। महान शिक्षाशास्त्री पाउले फ्रेंरे शिक्षा व्यवस्था में उत्पीड़न की प्रकिया पर कहते हैं कि ''अमानवीयकरण की प्रक्रिया बर्बरता को सहन करने वाले व्यक्ति के साथ ही नहीं बल्कि जुल्म करने वाले व्यक्ति की इंसानियत का क्षरण करता है।[3] स्पष्ट रूप सें श्रेणीकरण के कारण प्राध्यापकीय सम्बन्ध लोकत्रांत्रिक नहीं बल्कि सांमती और कई बार गुलामी प्रथा का आभास देते हैं, संविधान की मूल भावना और मानवाधिकारों का खुल्मखुल्ला उल्लंघन करते हुए।आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि भारत उन देशों में है जहॉं उच्च शिक्षा के डिग्री कालेजों में डेस कोड राष्टीय बहस का विषय है,मानो कॉलेज स्वतंत्र विमर्श के स्थान के बजाय सैन्य छावनी है। यह बहस उन्नत समाजों में कभी की समाप्त हो चुकी है। यही भारत में ज्वलंत विषय है,शायद यहॉं अगली बहस का विषय होगा कि पृथ्वी गोल है अथवा चौकोर ?स्वत्रंत्रता, विवेक और मानवीय तर्क का कार्यसंस्कृति में अभाव उच्च शिक्षा में संख्या को जन्म दे सकता है किसी नई सोच को नहीं। नई सोच संवाद से पैदा होती ,स्वतंत्र चेतना से उभरती है।

आधुनिक परिपेक्ष्य में शिक्षा की प्रमुख समस्या के रूप में सभी बच्चों को आधारभूत प्राथमिक शिक्षा का न मिलना है। शिक्षा का अधिकार अधिनियम को व्यवहारिक रूप में परिणित करने में अनेक दुश्वारियाँ सामने आ रही हैं। जो वर्तमान परिदृश्य है उसमें न तो पर्याप्त विद्यालय हैं और न ही पर्याप्त शिक्षक हैं। अनेकों स्कूल ऐसे हैं जिनकी इमारतें पक्की नहीं हैं न बैठने के पर्याप्त इंतजाम हैं और न ही पीने के पानी और शौचालयों आदि की ही व्यवस्था है। प्रशिक्षित एवं योग्य अध्यापकों की कमी शिक्षा के विकास में बाधक है। जो शिक्षक बच्चों को बढ़ायेंगे वे कितनी गुणवत्तापरक शिक्षा उन्हें दे सकेंगे क्योंकि हमारे यहाँ ऐसी संस्थाओं का अभाव है जो अध्यापकों को पूर्ण प्रशिक्षित कर उन्हें इतना पारंगत बना सकें कि वे गुणवत्तापरक शिक्षा दे सकें। ऐसे में बड़े पैमानें पर शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था न हो पाने के कारण गुणवत्तापरक शिक्षा पर सवालिया निशान लग जायेगा और अप्रशिक्षित अध्यापकों द्वारा पढ़ाये बच्चों का भविष्य क्या होगा, यह अनुमान लगाया जा सकता है। दोषपूर्ण पाठ्यक्रम शिक्षा व्यवस्था की एक अन्य प्रमुख समस्या है क्योंकि पाठ्यक्रम अरुचिकर एवं दोषपूर्ण है। यह छात्रों को रचनात्मक विकास में सहायता नहीं देता है। शिक्षा केवल रटना ही है, व्यवहारिक जीवन के साथ उसका कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। पाठ्य विषयों का चयन विद्यार्थियों से आयु वर्ग तथा बौद्धिक स्तर के अनुकूल नहीं है। पाठ्य विषयों की बहुलता है मानो विद्यार्थी में सब प्रकार का ज्ञान ठूँस–ठूँस कर भरने की उतावलापन है। प्रदत्त शिक्षा के प्रयोग की न आवश्यकता समझी जाती है और न ही उसके लिए अवसर है। वर्तमान समय में विभिन्न शिक्षा संस्थान जो मोटी फीस लेकर शिक्षा दे रहे हैं। जहाँ उच्च एवं मध्यम वर्ग के बच्चे शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। वे केवल बच्चों को परीक्षायें पास करने की कला

सिखा रहे हैं अतः ये विद्यालय बच्चों में ज्ञान के प्रति वास्तविक समझ एवं सृजनात्मकता को विकसित करने में अक्षम सिद्ध हो रहे हैं।

माध्यमिक शिक्षा देश के विकास की रीढ़ है। वर्तमान समय में पाठ्यक्रम प्रशासन अध्यापक प्रशिक्षण एवं अनुदान सम्बन्धी समस्याएँ माध्यमिक शिक्षा के प्रसार में बाधक हैं। माध्यमिक शिक्षण संस्थाओं में व्याप्त अध्यापक गुटबन्दी जिससे शिक्षण कार्य प्रभावित होता है, प्रमुख समस्या है। इसके कारण विद्यालयों में शैक्षिक वातावरण का अभाव एवं विद्यार्थियों में शिक्षा के प्रति अरुचि जागृत होती है एवं शिक्षकों के प्रति भी असम्मान की भावना जागृत होती है। माध्यमिक शिक्षा विद्यार्थी की रुचि के आधार पर उसका वर्गीकरण करने में अक्षम सिद्ध हो रही है जिस कारण बालक उस शिक्षा को विश्वविद्यालय स्तर पर ग्रहण करने लगता है जिसमें उसकी बिल्कुल भी रुचि नहीं होती है अतः शिक्षा उसकी जीवकोपार्जन की समस्या को हल करने में सहायक सिद्ध नहीं होती है। माध्यमिक शिक्षा के उपरान्त उच्च शिक्षा की समस्या वर्तमान समय में प्रमुख रूप से विद्यमान है। उच्च शिक्षा के विकास हेतु डिग्री कालेज तो बहुत खोले गये हैं लेकिन वे केवल डिग्री देने का माध्यम बन गये हैं क्योंकि इन कालेजों का प्रशासन ऐसे व्यक्तियों के हाथों में है जो या तो नेता हैं या व्यापारी हैं जिसका शिक्षा की गुणवत्ता से कोई लेना–देना नहीं है उनके लिए शिक्षा तो केवल एक व्यवसाय है। अतः उनको छात्रों की शैक्षिक सामाजिक आर्थिक समस्याओं से कोई लेना–देना नहीं है। इस प्रकार के विद्यालय शिक्षक भी ऐसे रखते हैं जो कम पैसे में उनके विद्यालय में पढ़ा सकें या केवल डिग्री देकर विद्यालय की मान्यता को बरकरार रख सकें। स्पष्ट है कि शिक्षा की ऐसी व्यवस्था छात्र असंतोष को बढ़ावा देती है जिसका खामियाजा समाज को चोरी, डकैती आदि घटनाओं के रूप में भुगतना पड़ता है।

वर्तमान समय में हजारों की संख्या में तकनीकी एवं प्रबंधन संस्थान खोले जा रहे हैं क्योंकि भारत को आर्थिक प्रगति हेतु इंजीनियरों एवं पेशेवर प्रबंधकों की आवश्यकता है किन्तु इन क्षेत्रों की प्रमुख समस्या गुणवत्तापूर्ण शिक्षा का अभाव एवं नियोजन (च्संददपदह) की है। इससे तकनीकी की एक शाखा में बहुत अधिक व्यक्ति शिक्षित हो गये एवं अन्य क्षेत्रों में बहुत ही कम लोग शिक्षित हो पाये हैं। परिणामस्वरूप इन क्षेत्रों में बेरोजगारी फैल गई। पिछले वर्षों में छाई आर्थिक मन्दी ने इन क्षेत्रों में गंभीर समस्या का रूप धारण कर लिया था। वर्तमान समय की तकनीकी शिक्षा में भी उचित नियोजन, प्रासंगिक पाठ्य पुस्तकों, शिक्षकों तथा कार्यशालाओं के साधनों का अभाव समस्या के रूप में विद्यमान है।

वर्तमान के मौजूदा परिवेश की बात की जाए तो छात्र, शिक्षक तथा अभिभावक का दृष्टिकोण बिल्कुल ही बदल चुका है। शिक्षा में ह्रास के लिए यद्यपि हमारा समग्र समाज एवं सरकार पूर्णरूपेण उत्तरदायी है। परन्तु शिक्षा के ह्रास में शिक्षक की भूमिका अग्रणी ही मानी जायेगी। आज ऐसे अध्यापकों की कमी नहीं है। जो सत्र मे आने वाले अधिकांश कार्य दिवसों में किसी न किसी प्रकार के अवकाश का उपभोग करते हैं ट्यूशन करने में आंशिक रूप से भी नैतिकता का पुट नहीं मिलता। कुछ शिक्षक अवकाश लेकर ट्यूशन ही नहीं पढ़ाते हैं, वरन् वे कालेज के समय में ही घरों पर ट्यूशन पढाने पाले शिक्षको की संख्या इतनी अधिक हो जाती है कि कालेज के समय में लगने वाली कक्षायें बौनी पड़ जाती है। सुचारू रूप से सत्र के कार्यदिवसों में कक्षायें न लगने के लिए प्रेक्टिकल तक, उच्च प्राप्तांक दिलाने का पूर्ण आश्वासन आरम्भ में ही दे देते हैं तथा वे ही उन छात्रों को समय–समय पर यह भी सलाह देते रहते हैं कि कालेज की नियमित कक्षाओं के स्थान पर विभिन्न विषयों की ट्यूशन घर पर ही पढकर वे अच्छे प्राप्तांक पा सकते हैं।

कतिपय शिक्षक ऐसे भी हैं जो पूरे वर्ष में कुछेक एक बार से अधिक कक्षाओं में नहीं जाते। कुछ ऐसे भी शिक्षक हैं जो कई वर्षो से लगातार न कालेज ही आते हैं तथा वर्षो से उन्होंने कक्षा में नहीं पढ़ाया है। अपनी किसी न किसी तिकड़म से वेतन को प्राप्त करते रहते है। यदि कभी वेतन मिलने में कोई व्यवधान भी आता है तो कोर्ट कचहरी की शरण लेकर बिना काम किये ही अपनी पूरा तथाकथित सर्विस का वेतन प्राप्त कर लेते है। इस प्रकार कोर्ट कचहरी की शरण लेकर वेतन भोगियें की संख्या यदि इसी गति से बढ़ती रही तो वह दिन दूर नहीं है जब शत–प्रतिशत शिक्षक बिना अध्यापन किये ही कोर्ट कचहरी के माध्यम से ही वेतन लेना पसन्द करेगें।

अब वह समय आ गया है जब मानव को अपनी अन्तरात्मा का परीक्षण करना ही होगा। वह जहाँ भी हो, चाहें वह डाक्टर हो, इन्जीनियर हो, राजनीतिज्ञ हो, वकील हो, शिक्षक हो, विद्यार्थी हो, पूँजीपति हो, व्यापारी हो, नौकर हो, किसान हो अथवा मजदूर हो उसे इस टूटती हुई शिक्षा को पुनः सुस्थिर करना ही होगा। देश का भविष्य इन्हीं सभी के कन्धों से कन्धा मिलाने एवं एक जुट होने पर ही उज्जवल हो पायेगा। शिक्षा जगत में व्याप्त अव्यवस्था, भ्रष्टाचार एवं भेद–भाव को मिटाना होगा। छात्र–छात्राओं को नैतिक मूल्यों से अवगत कराना होगा। यद्यपि इस कार्य में सर्वाधिक भूमिका प्राचार्य एवं शिक्षक की ही रहेगी तथापि समाज एवं सरकार को भी अपना कर्तव्य एवं धर्म का पालन करना ही होगा।

किसी भी देश की शिक्षा व्यवस्था में उच्च शिक्षा का स्थान सर्वप्रमुख होता है क्योंकि उच्च शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जो किसी राष्ट्र के शासन, प्रशासन, समाज तथा राजनीति एवं न्याय का निर्धारण करती है। उच्च शिक्षा को विशेष रूप से महत्व दिया जाता है क्योंकि उच्चकोटि के वैज्ञानिक, नेता, साहित्यकार, तथा दार्शनिक विश्वविद्यालयों के प्रांगण से ही उत्पन्न होते हैं। ज्ञान के क्षेत्र को विस्तृत बनाने के लिये विश्वविद्यालय महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। माध्यमिक शिक्षा की समाप्ति के उपरान्त शिक्षार्थी के भावी जीवन के स्वरूप का निर्धारण काफी सीमा तक उच्च शिक्षा के स्तर पर ही निर्भर करता है।

यह ध्रुव एवं अटूट सत्य है कि शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक की भूमिका धुरी के समान है। यदि शिक्षा जगत में शिक्षक निष्पक्ष, उदार, कर्मठ, जागरूक एवं अपने विषय में निष्णात है तो उसका विद्यार्थी भी कुन्दन के समान ही सिद्ध होगा। माता–पिता जिसय प्रकार अपने पुत्र की उन्नति में अपना जीवन धन्य समझते है उसी प्रकार गुरू भी अपने शिष्य के उत्कर्ष में अपना गौरव समझें तभी शिक्षक बनने की सार्थकता है अन्यथा उसे पद मुक्त हो जाना ही श्रेयस्कर रहेगा। अब निश्चित ही वह दिन अति सन्निकट है जबकि निष्क्रिय एवं पक्षपाती शिक्षक का काला मुख करके उनके ही शिष्य उन्हें महाविद्यालय से बाहर कर देंगे।

साक्षरता एक राष्ट्र के विकास का आधार है। आज जहाँ दुनिया के बेहतरीन प्रशिक्षित मानव संसाधन भारत में हैं वहीं दुनिया के सबसे अधिक अशिक्षित लोग भी भारत में पाये जाते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में इस अन्तर का कम होना अति अनिवार्य है। आज की कई गाँव ऐसे हैं जहाँ दूर–दूर तक विद्यालय नहीं है। अतः ऐसे गाँवों का सर्वे कर विद्यालय बनाये जाएँ। विद्यालय तथा आवासीय क्षेत्रों में दूरी गुणवत्तायुक्त शिक्षा प्राप्ति में बाधक है इसके लिए दूरस्थ क्षेत्रों में विद्यालय खोले जाएँ तथा ऐसे क्षेत्रों में सरकार द्वारा उचित परिवहन साधनों की व्यवस्था उपलब्ध करवानी चाहिए। लेकिन केवल स्कूल बना देना ही पर्याप्त नहीं होगा बल्कि बच्चों को स्कूलों तक लाना भी शिक्षा के अधिकार अधिनियम की सफलता के लिए अति

आवश्यक है। लोगों को शिक्षा का महत्व समझाना एवं इसकी अनिवार्यता का एहसास दिलाना भी अत्यन्त आवश्यक है। अभी भी कुछ पिछड़े क्षेत्रों में लोगों की धारणा है कि लड़की को पढ़ाने का अर्थ उसका चरित्र बिगाड़ना है। इन सभी रूढ़िवादी विचारों को दूर करना भी शिक्षा के विकास के लिए अत्यन्त जरूरी है। भारत के बहुत से बच्चे आर्थिक कारणों से भी शिक्षा ग्रहण नहीं करते। उनके अनुसार 'जो समय हम स्कूल में व्यर्थ गँवायेंगे। उस समय में हम खेतों तथा कारखानों में काम करके कमा सकते हैं। अतः इन कारणों की गंभीरता को जानकर इनके निदान हेतु प्रयास किये जाने चाहिए।

शिक्षा के स्तर को ऊपर उठाने के लिए इन समस्याओं का निराकरण करना अति आवश्यक है। इन समस्याओं के निराकरण के सुझाव निम्न है– शिक्षा की निश्चित नीति, शिक्षा के प्रशासन में सुधार, पाठ्यक्रम में सुधार, प्रशिक्षित अध्यापको की पूर्ति, विद्यालय भवनों का निर्माण, सरकार का शिक्षा पर पूर्ण ध्यान, सहायक सेवाये (जैसे– निःशुल्क मध्यान्तर भोजन, निःशुल्क पाठ्य पुस्तक, लेखन साम्रगी, ड्रेस का वितरण आदि), परीक्षा प्रणाली में सुधार आदि। शिक्षा, शिक्षक और समाज जैसे–तीन पक्ष किसी भी राष्ट्र के विकास हेतु अपनी अहम भूमिका निभा सकते हैं और समाज तथा संस्कृति के मूल्यों को स्थापित भी कर सकते हैं। इससे हम, भारतीय शिक्षा व्यवस्था को नये कलेवर के साथ नये क्षितिज तक पहुॅचाकर भूमण्डलीकरण के भवर में भटकती भारतीय शिक्षा को नया आयाम दे सकते हैं। कहने का आशय यह है कि हमें शिक्षा के संदर्भ में हीन ग्रन्थियाँ पालने की आवश्यकता नहीं है। यह सच है कि नये दौर में हम थोड़ा पिछड़ गये हैं। शिक्षा का ढ़ाँचा चरमरा गया है मगर इस स्थिति से उबरा जा सकता है, बशर्ते दृढ़ इच्छा शक्ति के साथ शिक्षा व्यवस्था में सुधार के पारदर्शी प्रयास हों। इस दिशा में जो सुधार हो रहे हैं वे अत्यन्त ही प्रभावकारी सिद्ध हो रहे हैं। हम ऐसी उम्मीद कर सकते हैं कि आने वाले दिनों में हम शिक्षा के अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के समक्ष पहुँच जायेंगे। बुनियादी शिक्षा की संरचना मजबूत होगी बस आवश्यकता इस बात की है कि सुधार की नई पहलों की सार्थकता पर विशेष बल दिया जाए तथा इनके व्यवहारिक पहलुओं की अनदेखी न की जाए।

अंत में कहा जा सकता है कि अध्यापक शिक्षा के दोनों पहलुओं, सेवापूर्ण एवं सेवारत अध्यापक शिक्षा को धान में रखकर कौशल आधारित मॉडल का निर्माण कर उसकी क्रियान्विति की सुनिश्चितता हेतु व्यूह रचना का निर्माण कर सुधार करने के प्रयास करने चाहिए ताकि राष्ट्र को योग्य शिक्षक उपलब्ध हो सकें एवं सभी के लिए (Eduction for All) की संकल्पना पूर्ण होने के साथ–साथ गुणवत्ता आधारित जीवनोपयोगी शिक्षा भी मिल सके और राष्ट्र तेजी से विकास पथ पर आगे बढ़ सके। इसके साथ ही उच्च शिक्षा संस्थागत ढाँचे नहीं बल्कि सूचना प्रौद्योगिकी की शक्ति पर सवार होकर अपना रूप बदल रही है।यह अलग बात है कि क्षेत्रीय विविधता और प्रशासनिक इच्छाशक्ति के अनुसार बदलाव की गति अलग अलग होगी। कवि 'बायरन' ने फ्रेंच क्रांति के लिए कभी लिखा था कि एक सुहानी सुबह जब मै जगा तो पाया कि दुनिया बदल चुकी थी। सूचना क्रांति उच्च शिक्षा को इतने नाटकीय रूप में शायद न बदल पाए लेकिन इसे एकाधिकार और आभिजात्य से आजाद कर जन सुलभ अवश्य बना देगी।

संदर्भ

1. कारनाय मार्टिन, सांस्कृतिक साम्राज्यवाद – पृ0 सं 63
2. कुमार कृष्ण ,राज,समाज और शिक्षा–पृ0 सं 39

3. 3.उत्पीड़ितों का शिक्षा शास्त्र–पाउले फ्रेरे ,पृ0 सं 44

अन्य संदर्भ ग्रन्थ

- काबरा कमल नयन ; भूमण्डलीयः विचार, नीतियां और विकल्प,पृ0–18
- सिंह डॉ कर्ण गोविन्द,भारत में शिक्षा प्रणाली का विकास– प्रकाशन,लखीमपुर खीरी।
- लाल, रमन बिहारी,भारतीय शिक्षा का इतिहास एवं समस्याएँ–एपसाइलन पब्लिशिंग हाउस, कानपुर।
- चौबे, सरयू प्रसाद,आदि और मध्य युगीन भारत में शिक्षा– विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
- शर्मा, डॉ0 आर0 ए0,भारत में शिक्षा का विकास–लाल बुक डिपो, मेरठ।
- भारत में शैक्षिक सुधार (समसामयिकी महासागर), अरिहन्त नम्व0 2009।
- आओ स्कूल चलें हम (कुरूक्षेत्र)– ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली– 2007।
- विद्या मेद्य, मासिक पत्रिका, मेरठ, जुलाई, नम्व0 2009, अगस्त 2010।
- राम डॉ0 सिया,नई सदी में भारत : दशा एवं दिशा–,ओमेगा पब्लिकेशन्स,नई दिल्ली–2012